बौद्ध धर्म के प्रचार में मौर्य सम्राट् अशोक का योगदानः एक विश्लेषण

[1]सरिता कुमारी, [2]डॉ.धर्मेंद्र यादव (सहायक आचार्य)

[1]शोधार्थी, [2]पर्यवेक्षक

[1-2]विभाग: इतिहास, डॉ. के.एन. मोदी विश्वविद्यालय, निवाई, राजस्थान-304021

सार

मौर्य सम्राट् अशोक का बौद्ध धर्म के प्रचार में अतुलनीय योगदान रहा है, जिसने न केवल भारतीय उपमहाद्वीप में बल्कि पूरे विश्व में बौद्ध विचारधारा के प्रसार को गति दी। कलिंग युद्ध के पश्चात् हुए गहन पश्चाताप ने अशोक को अहिंसा और धर्म–विजय की नीति अपनाने हेतु प्रेरित किया, जिसके तहत उन्होंने अपने साम्राज्य की शक्ति का उपयोग शस्त्रों से विजय के बजाय धम्म के माध्यम से स्थायी शांति और सामाजिक समरसता स्थापित करने में लगाया। अशोक की धम्म नीति ने नैतिकता, सहिष्णुता, दया, दान, और सत्य जैसे गुणों को सामाजिक व्यवहार का आधार बनाया तथा सर्वधर्म समभाव का सिद्धांत अपनाकर विभिन्न धर्मों और संप्रदायों के अनुयायियों का सम्मान किया। उनके अभिलेखों एवं शिलालेखों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि अशोक का धम्म केवल बौद्ध धर्म तक सीमित न होकर सार्वभौमिक मानवतावादी मूल्यों पर आधारित था, जिसने अहिंसा और जनकल्याण के व्यापक सिद्धांत स्थापित किए। इस प्रकार, सम्राट् अशोक ने अपने शासनकाल में बौद्ध धर्म के प्रचार को नयी दिशा दी और धर्म के माध्यम से राजनीतिक तथा सामाजिक स्थिरता की नींव रखी।

मुख्य शब्दः मौर्य सम्राट् अशोक, बौद्ध धर्म, धम्म नीति, कलिंग युद्ध, अहिंसा, धर्म प्रचार, सर्वधर्म समभाव, सामाजिक समरसता, नैतिकता, धम्म विजय।

भूमिका

अशोक की धम्म–विजय की नीति के कारण विष्व के इतिहास में उसे महत्वपर्ण स्थान प्राप्त है। अषोक ने वृहद् मौर्य साम्राज्य की शक्ति का उपयोग अन्य देषों को जीतने की अपेक्षा अपनी धम्म–नीति के प्रसार हेतु किया। उसके अनुसार शस्त्रों द्वारा प्राप्त विजय स्थायी नहीं होती क्योकि वास्तविक विजय शस्त्रों की बजाय धम्म के द्वारा प्राप्त की जा सकती है, जो कि सभी के लिए हितकर एवं चिरकाल तक स्थिर होती है। कलिंग विजय में हुए भीषण जन–विनाष के पष्चात् अषोक ने शस्त्र विजय के स्थान पर धम्म विजय की नीति को अपनाना श्रेष्ठकर समझा अतः उसने अपनी शक्ति का उपयोग धम्म–विजय के लिए करना आरंभ किया। इसी तथ्य के अनुभव कर सम्राट् ने शस्त्र–विजय की नीति का परित्याग कर धम्म–विजय की नीति को ग्रहण किया। शस्त्रों से प्राप्त विजय के सबंध में अषोक ने व्यक्त किया कि ''अष्टवर्षाभिषिक्त देवानांप्रिय प्रियदर्षी राजा ने कलिंग को विजय किया। वहां से डेढ़ लाख मनुष्यों का अपहरण हुआ। वहां सौ सहस्त्र (एक लाख) मारे गये। उससे भी अधिक मरे (मृत्यु को प्राप्त हुए)। उसके पष्चात् अब जीते हुए कलिंग में देवानांप्रिय द्वारा तीव्र रूप से धर्म का व्यवहार, धर्म की कामना और धर्म का उपदेष (किया जा रहा है)। कलिंग की विजय करके देवानांप्रिय को अनुषोचन (पष्चाताप्) है। जब कोई अविजित (देष) जीता जाता है, तब लोगों का जो वध, मरण और अपहरण होता है, वह देवानांप्रिय के लिए अवष्य वेदना का कारण होता है और साथ ही गंभीर बात भी। देवानांप्रिय के लिए इससे भी अधिक गंभीर बात यह है कि जो वहां ब्राह्मण, श्रमण, अन्य पाषण्ड (संप्रदाय) और गृहस्थ निवास करते हैं और जिनमें अपने अग्रणियों (प्रमुख व्यक्तियों की सेवा), माता–पिता की सवेा, गुरूजनों की सेवा तथा मित्र, परिचित सहायक,ाति (स्वजातीय व संबधी) जन, दास और भृतकों के प्रति सम्यक् व्यवहार किया जाता है और जिनमें दृढ़ भक्ति भी पायी जाती है, उनका भी वध हो जाता है या मृत्यु हो जाती है या उन्हें अपने प्रियजनों का वियोग सहना पड़ता है। उनमें से (वध आदि से) जो बच भी जाते हैं और (युद्ध के परिणामस्वरूप) जिनके स्नेह में कोई कमी भी नहीं आती, उनके भी मित्र, परिचित, सहायक औराातिजन संकट में पड़ जाते हैं जिसके कारण उन्हें भी आघात सहन करना

पड़ता है। इस प्रकार (युद्ध के परिणामस्वरूप) विपत्ति सभी मनुष्यों के भाग में आती है। देवानांप्रिय के लिए यह बात बहुत अधिक गंभीर है। यवनों के अतिरिक्त अन्यत्र कोई एसा जनपद नहीं है, जहां ब्राह्मणों और श्रमणों के निकाय (संप्रदाय) न हो। कोई एसा जनपद नहीं है, जहां मनुष्यों का किसी–न–किसी पाषण्ड (संप्रदाय) में अनुराग न हो। कलिंग को प्राप्त करने में जितने मनुष्य मारे गए हैं, मरे है, या अपहरण किए गए हैं, उनका सौवां या हजारवां भाग भी अब देवानांप्रिय के लिए गंभीर है। यदि कोई अपकार करता है तो वह देवानांप्रिय के लिए क्षन्तव्य है, जहां तक क्षमा करना सभंव हो। और जरे अटवि (जांगल प्रदेष) देवानांप्रिय के विजित (जीते हुए क्षेत्र) में है, उन पर भी वह अनुनय (अनुग्रह) करता है और ध्यान देता है। देवानांप्रिय के अनुताप में भी प्रभाव (षक्ति) है। उनसे (अटवि के निवासियों या आटविक जनों) से कहा जाता है। क्या कहा जाता है? किसी की हत्या न करो, अपितु सब की रक्षा करो। देवानांप्रिय सब प्राणियों की अक्षति (विनाष का अभव या हितसाधन), सयंम समाचर्य और मार्दव (मृदुता) की कामना करते हैं। धर्म विजय ही देवानांप्रिय की दृष्टि में प्रधान (वास्तविक) विजय है। यह धर्मविजय देवानांप्रिय ने यहां अपने राज्य में, सीमांत–क्षेत्र में और छः सौ योजनों तक के पडौसी राज्यों में प्राप्त की है। जो धर्मविजय है, वह एहलौकिक और पारलौकिकी दोनों है। धर्मरति सम्पूर्णतः अति आनंद देने वाली है। वहीं एहलौकिकी और पारलौकिकी है।'' अतः इस अभिलेख के माध्यम से अशोक ने धर्मनीति के संबंध में महत्वपर्ण प्रकाश डाला है।

अशोक की धम्म नीति : अर्थ, स्वरूप, उद्देष्य एवं विषेषताएं

अपने अभिलेखों में अशोक ने धम्म के विधायक एवं निषेधात्मक दोनों पहलू का उल्लेख किया है। अषोक के स्तंभ लेख 2 एवं 7 में ''साधवे या बहु–कयाने अर्थात् सत्कार्य प्रभूत, अप–आसिनवे, अर्थात् दुष्कार्य अल्प, दया, दान अर्थात् उदारता, सचे अर्थात् सत्यवादिता, सोचये अर्थात् पवित्रता, मादवे अर्थात् मृदुता'' को धम्म के विधायक पहलू के रूप में वर्णित किया गया है। विविध लेखों के माध्यम से विभिन्न स्थानों पर उसने उन आचरण का उल्लेख किया जिनसे धम्म के विधेयात्मक स्वरूप को कार्य रूप में परिणित किया जा सके। ये आचरण चतुर्दष षिलालोख में इस प्रकार वर्णित है कि ''माता–पिता की सेवा करना साधु (अच्छी) बात है। मित्र, परिचित, ब्राह्मणों और श्रमणों को दान देना साधु है। प्राणियों की हिंसा न करना साधु है।'' इसी प्रकार चतुर्दष षिलालेखों के नवें लेख में दासों एवं नौकरों के प्रति उचित व्यवहार, गुरूजनों के प्रति आदर, समुचित प्राणियों के साथ सयंम से काम लिया जाए एवं साधु–सन्यासियों को दान इत्यादि को धम्म के मंगलाचार के रूप में वर्णित किया। अतः उपरोक्त आचरण–नियमों को देखने से यह स्पष्ट होता है कि अषोक के धम्म का मुख्य उद्देष्य सांसारिक जीवन और सामाजिक सबंधों में पवित्रता लाने से एवं सुव्यवस्था स्थापित करने से था। यहां यह बिंदु ध्यातव्य है कि अषोक ने अपने 'धम्म' में संबंधी, मित्र, दास–भृतकों इत्यादि के साथ पषु–पक्षियों को भी सम्मिलित किया था। वहीं धम्म के निषेधात्मक पहलू के रूप में अषोक यह बतलाता है कि धम्म क्या नहीं है। मनुष्य को इनसे बचना चाहिए। इन अवांछनीय कृत्यों के लिए अषोक ने (अप–आसिनव) अर्थात् यथासभंव न्यनू तम आसिनव के रूप में वर्णन किया है। इसी के साथ अषोक ने स्तंभ प्रज्ञापन 3 में उन हानिकारक विकारों का वर्णन किया जिनके परिणामस्वरूप आसिनव होता है जिसके अंतर्गत चंडिये अर्थात् प्रंचडता, निठुलिये अर्थात् निर्दयता, कोधे अर्थात् क्रोध, माने अर्थात् घमंड, ईस्या अर्थात् ईर्ष्या।

अतः धम्म के विधायक पहलू के रूप में अषोक ने न केवल धम्म के उपादान रूपी गुणों का उल्लेख किया है अपितु उसने इनमें उन नैतिक आचरणों का समावेष भी किया है जिनमें ये गुण प्रत्यक्ष रूप से विद्यमान है। वहीं धम्म के निषेधात्मक पहलू के रूप में उन हानिकारक विकारों का समावेष किया जो कि मनुष्य को पाप एवं अधपतन (आसिनव) की ओर प्रेरित करते हैं। धम्म के स्वरूप में अषोक ने धार्मिक सिद्धांतों की अपेक्षा सदाचार के नियमों पर विषेष रूप से बल दिया। उसने धम्म नीति में तत्व विज्ञान, ईष्वर एवं आत्मा का उल्लेख न करके केवल उसी नीति पर बल दिया जो वासनाओं को नियंत्रित करने, स्वंय के आंतरिक विचारों में, जीवन एवं आचरण को पवित्र बनाने, अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णु होने, जानवरों के विरूद्ध हिंसा न करने, सबके प्रति उदार भाव रखने, माता–पिता, गुरू, संबंधियों, मित्रों एवं साधुओं के प्रति सम्मान प्रकट करने, नौकरों एवं दासों के प्रति उदार भाव एवं दया भाव रखने एवं सर्वोपरि सत्य बोलने इत्यादि महत्वपर्ण तत्वों को शामिल किया। उसके धम्म में कहीं भी साम्प्रदायिकता का पुट न मिलकर इसमें केवल मनुष्यों के लिए सामान्य नैतिक आचरणों पर बल दिया गया है।

अशोक की धम्म नीति का उल्लेख उसके अभिलेखों में सबसे सुन्दरतम् रूप में किया गया है। इन अभिलेखों के अध्ययन से यह निष्चित हो जाता है कि बुद्ध के धम्म को अषोक ने मानवतावादी दृष्टिकोण से देखा और समझा था। उसकी धम्म–नीति अत्यधिक व्यावहारिक, सोद्देष्यपूर्ण एवं गहन नैतिक थी। धम्म के आचार एवं विधि के सबंध में अषोक ने स्पष्ट रूप से कहा कि ''मुझे इसकी चिंता नहीं कि कौन किस धर्म विषेष का अनुयायी है किंतु मैं यह अवष्य कहता हूं कि सभी एक–दूसरे का आदर करें, मैत्री और शांति का जीवन बिताएं तथा सामाजिक सदाचार का अभ्यास करे।'' उसने अपने सातवें स्तंभ लेख मेंधम्म के बारे में वर्णन करते हुए कहा कि ''देवानांप्रिय प्रियदर्षी राजा ने ऐसा कहा– धम्म साधु है। पर धम्म क्या है? अल्पपाप (पाप को कम – से – कम करना), बहु कल्याण (बहुत–से कल्याणकारी कार्य करना), दया, दान और षौच (षुचिता या पवित्रता)।'' इसी प्रकार धम्म गुणों पर चर्चा करते हुए उसने ब्रह्मगिरि के लघु षिलालेख में वर्णन किया है कि माता–पिता की सेवा करनी चाहिए। (प्राणियों के) प्राणों के प्रति आदर की भावना को दृढ़ करना चाहिए। इन धर्मगुणों का प्रवर्तन करना चाहिए। इसी प्रकार अन्तवेासी (षिष्य) द्वारा आचार्य (गुरू) का आदर किया जाना चाहिए। कुल (परिवारजनों) के प्रति यथायोग्य बरताव करना चाहिए। यह पुरानी परंपरा है जिससे दीर्घापुष्प प्राप्त होता है। इसका पालन किया ही जाना चाहिए।

उपरोक्त विवेचन से इस बात में कोई संदेह नहीं कि अषोक की धम्म–नीति; कोई संप्रदाय विषेष पर आधारित न होकर सभी धर्मों एवं सभी सप्रंदायों से सबंधित थी। धम्म के अभिप्राय को स्पष्ट करने हेतु वह इतना उत्सुक रहता था कि एक ही बात को उसमें बार–बार दोहराने का दोष आ गया। अषोक जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने धम्म को प्रयुक्त करने में उत्सुक था। इसी के कारण उसने जनता के सामान्य व्यवहार के साथ धम्म व्यवहार के साथ तुलना की। इस प्रकार की अनेक तुलनाएं हमें उसके द्वारा उत्कीर्ण लेखों से मिलती है। इसके सबंध में चतुर्दष षिलालेखों के नवें लेख में अषोक ने वर्णित किया की ''लोग ऊंच–नीच (अच्छी–बुरी) दषा में अनेक प्रकार के मंगल करते हैं। आबाधा (विपत्ति) के अवसर पर, विवाह (कन्या के विवाह या कन्या को ले जाने) के अवसरों पर, विवाह के समय, संतान के उत्पन्न होने पर, प्रवास के समय और इसी प्रकार के अन्य अवसरों पर लोग बहुत प्रकार के मंगल (मंगलाचार या मंगल कार्य) करते हैं। ऐसे समयों पर स्त्रियां बहुत–से और बहुत प्रकार के पूतिक (घृणास्पद) या क्षुद्र और निरर्थक मंगल–कार्य करती है। मंगल कार्य तो अवष्य ही करने चाहिए। इस प्रकार के मंगल कार्य अल्पुल वाले हैं। जो धर्म मंगल है, वह सुनिष्चित रूप से महाफल वाला है। इसी तरह साधारण दान एवं धम्मदान में परस्पर अंतर स्पष्ट करते हुए अषोक वर्णन करता है कि ''ऐसा कोई दान नहीं है, जैसा धर्म का दान है।'' इस अभिलेख के माध्यम से अषोक ने साधारण दान के स्थान पर धम्म दान को सब दानों से श्रेष्ठ बताया। धम्म दान के तहत अषोक का तात्पर्य माता–पिता की सेवा, अहिंसा, दासों एवं भृतकों के साथ समुचित व्यवहार से था। इसी के अतिरिक्त अपने एक अन्य षिलालेख में अषोक ने साधारण विजय एवं धम्म विजय के मध्य अंतर स्पष्ट करते हुए वर्णन किया कि ''धम्म–विजय में प्रीति होती है। इस प्रीति के लघु होने पर भी देवानांप्रिय उसे पारलौकिक लाभ के लिए अत्यन्त महान् मानते हैं। इसी प्रयोजन से यह धम्मलिपि लिखवायी गयी। क्यों? इसलिये कि मेरे पुत्र, पौत्र जो हो, वे नई विजय (नये देष की विजय) को विजय न माने। विजय की इच्छा रखने पर वे सहनषीलता और लघुदण्डता के प्रति रूचि करें। जो धम्म–विजय है, उसी को वे विजय माने। धम्म विजय एहलौकिक और पारलौकिक दोनों है। धर्मरति ही अत्यन्त आनंद प्रदान करने वाली है। वहीं एहलौकिकी और पारलौकिकी है।'' इस अभिलेख के माध्यम से अषोक ने षस्त्र विजय के स्थान पर धम्म विजय को वास्तविक विजय माना जिसके तहत जनता का हित एवं सुख सर्वोपरि है यथा बुरे मार्ग से सन्मार्ग की ओर प्रवृत होना, सभी प्राणियों को निरापद एवं संयमी, शांत एवं निर्भय बनाने का कार्य करना इत्यादि का समावेष है एवं इस विजय की प्राप्ति के लिए उसने दया एवं त्याग को महत्वपर्ण तत्व माना।

सम्राट् अशोक के द्वारा उत्कीर्ण लेखों में बारम्बार 'धम्म' के अभिप्राय को स्पष्ट किया गया है एवं विभिन्न प्रकार के धम्म की जो तुलना की गई उसका मुख्य प्रयोजन यही था कि जनता को उसकी धम्म नीति से अवगत कराया जाए। इसके सबंध में किसी भी प्रचार–प्रसार के लिए वह प्रयत्नषील था यहां यह ध्यातव्य है कि अषोक ने जहां–जहां धम्म के अभिप्राय का जिक्र किया वहीं–वहीं उसने अधम्म अर्थात् पाप के बारे में भी उल्लेख किया। इसके संबंध में उसने अपने एक लेख में वर्णन किया कि ''देवानांप्रिय प्रियदर्षी राजा

ने ऐसा कहा – (मनुष्य स्वकृत) कल्याण को ही देखता है, 'मैनें यह कल्याणकारी कार्य किया'। उसे (स्वकृत) थोड़ा पाप भी दिखाई नहीं देता, 'मुझसे यह पाप किया गया या यह कार्य आसीनव (पाप) है।' निसंदेह, पाप को देख सकना कठिन ही है। किंतु यह अवष्य देखना चाहिए कि ये सब पाप की ओर ले जाने वाले हैं। जैसे चण्डता, नैष्ठुर्य, क्रोध, अहंकार और ईर्ष्या; और इनके कारण मैं कहीं अपने को भ्रष्ट न कर दूं।'' इस अभिलेख के माध्यम से सम्राट् अषोक ने चण्डता, निष्ठुरता, क्रोध, अभिमान एवं ईर्ष्या को पाप (आसिनव) के रूप में वर्णन कर सभी मनुष्यों को इनसे मुक्त रहने का निर्देष दिया है।

उपरोक्त लेखों के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अशोक का धम्म से अभिप्राय एसे सिद्धांतों से था जो कि सभी देषों, सभी संप्रदायों, सभी कालों में समान रूप से स्वीकार्य थे। इस तथ्य में कोई अतिषयोक्ति नहीं कि सम्राट् अषोक स्वंय बौद्ध मत का अनुयायी था लेकिन एक विषाल साम्राज्य के शासक के रूप में उसने कभी अपनी साम्राज्य की जनता पर बौद्ध धर्म को नहीं थोपा बल्कि उसने अपने धम्म नीति के तहत उन महत्वपूर्ण सिद्धांतों का प्रचार किया जो कि सभी धर्मों, स्थानों एवं कालों में सर्वग्राही थे। वह सर्वधर्म समभाव के सिद्धांत का अनुगमन करता था। जिसके संबंध में उसने अपने चतुर्दष षिलालेख के सातवें लेख में वर्णन किया कि ''देवानांप्रिय प्रियदर्षी राजा की यह इच्छा है कि सर्वत्र पाषण्ड (संप्रदाय) निवास करे। सभी (सब संप्रदाय) संयम और भावषुद्धि चाहते हैं। मनुष्यों की इच्छाए और अनुराग ऊंचे–नीचे (विभिन्न) प्रकार के हुआ करते हैं। वे या तो संपूर्ण रूप से (धर्म का) पालन करेगें और या एकदेष (आंषिक) रूप से जो प्रचुर रूप से दान नहीं कर सकता, उसमें भी सयंम, भावषुद्धि, कृतज्ञता और दृढ़ भक्ति का होना आवष्यक है।'' इस उत्कीर्ण लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि अषोक सर्वधम्म समभाव की नीति का अनुयायी था। वह किसी सप्रंदाय विषेष को अत्यन्त विषिष्ट एवं किसी अन्य सप्रंदाय को निकृष्ट नहीं समझता था बल्कि वह सभी सप्रंदाय की सयंम एवं भावषुद्धि का समर्थक था।

अतः सम्राट् अशोक के द्वारा प्रतिपादित धम्म की नीति कोई संप्रदाय विषेष न होकर एसे सिद्धांतों पर आधारित थी जो कि सभी सप्रंदायों द्वारा सम्मान रूप से ग्राह्य थी। उसकी धम्मलिपियों में जिस धम्म का प्रतिपादन किया वह बौद्ध धर्म पर केन्द्रित नहीं थी। यहां यह तथ्य भी ध्यातव्य है कि उसने अपनी राजषक्ति का प्रयोग बौद्ध धर्म के लिए न करके एसे धम्म के लिए कि जो कि उस युग के सभी धर्मों, सप्रंदायों में समान रूप से स्वीकार्य थी। विष्व के इतिहास मेंसम्राट् अषोक के धम्म के कारण उसे महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है क्योंकि उसने अपने शक्ति का प्रयोग शस्त्र–विजय एवं अपने धम्म के प्रचार के स्थान पर धम्म के उन तत्वों के लिए किया जो कि वैष्विक शांति, बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय पर केन्द्रित थी। अषोक की धम्म नीति की विषेषताएं अषोक के द्वारा अपने अभिलेखों में प्रयुक्त 'धम्म' का उल्लेख बहुतायत रूप से किया गया है जो कि किसी संप्रदाय धर्म विषेष पर केन्द्रित न होकर संपर्ण मानव जाति के लिए है। उसके धम्म में सभी धर्मों का सार है अर्थात् अषोक के धम्म संबंधी सिद्धांत सभी धर्मों में समान रूप से स्वीकार्य है। तथापि, अषोक के धम्म की अपनी कुछ मौलिकताए एवं विषेषताए हैं जिनका वर्णन निम्न प्रकार से है– सर्वधर्म–समभाव।

सांप्रदायिकता से रहित होने के कारण अषोक का धम्म काइे भी धम्म अथवा सप्रंदाय से ईर्ष्या–द्वेष करने की आज्ञा नहीं देता था। अषोक के अनुसार अपने धम्म की प्रषंसा करना एवं दूसरे धम्म की निंदा करना अनुचित है। उसके अनुसार मानव को बहुश्रुत अर्थात् सभी मतोंसे संबंधित जानकारी रखते हुए दूसरे धर्मों के आदर्षों एवं विष्वासों को भी जानना चाहिए ताकि मनुष्य स्वयं के धर्म के संकीर्ण दायरे से बाहर निकल के दूसरे धर्म के विचारों का भी आदर कर सके। ब्राह्मण एवं श्रमण दोनों को ही वह आदर की दृष्टि से देखता था। धम्म–सहिष्णुता के सबंध में उसने अपने सातवें, ग्यारहवें एवं बारहवें षिलालेख में महत्वपर्ण सूचना बताई है। बारहवें षिलालेख में अषोक विष्व–बधुंत्व का महत्वपूर्ण परिचय देता है। वह स्वयं बौद्ध होते हुए भी राजषक्ति के बल पर कभी भी बौद्ध धर्म को अपने साम्राज्य की जनता पर नहीं थोपा। अतः प्रत्येक धर्मावलम्बी का आदर करना एवं उनके धर्म को अपने धर्म के सापेक्ष समझना उसके धम्म की महत्वपर्ण विषेषता थी। परलोक में विष्वास परलोक में विष्वास करना अषोक के धम्म का एक मुख्य पक्ष है।

अषोक ने अपने विभिन्न लेखों में स्वर्ग की प्राप्ति एवं परलोक में सुख एवं आनंद प्राप्ति पर चर्चा की है।

परलोक सबंधी कल्पना मुख्यतः ब्राह्मण एवं बौद्ध दोनों ही धर्मों की अवधारणा में समान रूप से विद्यमान थी। उसने चौथे षिलालेख में बताया कि ''उसने स्वर्ग के सुखों का चित्रों में प्रदर्षित कर अपने प्रजाजनों को धर्माचरण द्वारा उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया। उसने उन समाजों अथवा उत्सवों पर रोक लगा दी जिनमें केवल नृत्य, संगीत और पषुवध का बोलबाला रहता था। उसने 'धर्मश्रवणो' का आयोजन प्रारंभ किया जिनमें धर्म की चर्चा होती थी और जन–सामान्य इसे सुनता था और लाभ उठाता था।'' सार्वभौमिकता अषोक का धम्म किसी धम्म, सप्रंदाय विषेष पर केन्द्रित न होकर धर्म के उन तत्वों पर आाधारित था जिसमें सभी धम्मों का सार विद्यमान था अर्थात् उसके धम्म सबंधी सिद्धांत सभी धर्मों के द्वारा प्रत्येक काल, परिस्थिति में समान रूप से स्वीकार्य थे। अतः उसकी धम्म–नीति में सार्वभौमिकता का समावेष होना महत्वपर्ण तथ्य है। नैतिक आदर्षों का प्रतिमान नैतिकता एवं सदाचरण उसके धम्म के मूल आधार थ। नैतिक आदर्षों के प्रतिमानों की स्थापना के लिए उसके द्वारा धर्म–श्रावणों एवं धर्मोपदेष की व्यवस्था की गई ताकि इसके माध्यम से प्रजाजन धम्म का अनुसरण करते हुए अभ्युदय प्राप्त करे एवं धर्मवृद्धि से उन्नति के पथ पर अग्रसर हो सके। इसके संबंध में सातवां षिलालेख दिल्ली टोपरा अभिलेख महत्वपर्ण है जिसमें धम्म के नैतिक तत्वों के बारे चर्चा करते हुए पाप न करना, शुभ कर्म का करना, दया, दान, सत्य एवं पवित्रता को धम्म के नैतिक तत्व बताएं। अतः उसकी धम्म–नीति मुख्यतः एक नैतिक सहिता थी जिसके अंतर्गत जनकल्याण, शांति, प्रेम इत्यादि महत्वपर्ण तत्वों का समावेष था।

आडंबरहीनता सम्राट् अषोक का धम्म बौद्ध धर्म की भांति कर्मकाण्ड पर आधारित न होकर मूलतः आचारमूलक था जिसके अंतर्गत मानव जीवन को सुन्दर एवं सुखमय बनाना मुख्य ध्येय था। उसने अधंविष्वासों के लिए किए जाने वाले निरर्थक अनुष्ठानों एवं यज्ञ इत्यादि की निंदा की गई। उसके अनुसार मनुष्यों को धम्म मंगल अर्थात् वास्तविक रीति–रिवाजों का अनुसरण करना चाहिए। आंडबरहीनता के संदर्भ में उसका नवां षिलालेख महत्वपर्ण है जिसके माध्यम से उसने अनुष्ठानों, यज्ञ इत्यादि का निषेध किया गया। प्रायोगिकता सम्राट् अषोक ने अपने धम्म को न केवल सैद्धांतिक रूप से स्थान दिया अपितु उसने अपने धम्म संबंधी सिद्धांतों को व्यावहारिक रूप से भी धरातलीय स्तर पर क्रियान्वित किया। ''दर्षन को महत्व न देकर व्यावहारिक कर्त्तव्यों को प्रधानता देने का एक बहुत बड़ुल यह हुआ कि अषोक ने विडम्बनाओं से लोगों की रक्षा की।'' इसके लिए उसने धम्ममहामात्रों की नियुक्ति की, उसने अपने धम्म संबंधी सिद्धांतों को षिलालेखों पर खुदवाया, हिंसा को कम करने हेतु षिकार खेलने की प्रथा को भी बदं करवाया इत्यादि महत्वपर्ण कृत्यों द्वारा उसने अपने धम्म संबंधी सिद्धांतों को धरातलीय स्तर पर व्यावहारिक रूप से क्रियान्वित किया। बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय अषोक की धम्म नीति सभी के कल्याण एवं उदारता पर आधारित थी। वह सदैव एक ऐसे वातावरण निर्मित करने को प्रयासरत् रहता था जिसमें कि सौहार्दपूर्ण व षांतिमय वातावरण, जहां पर निवास करने वाली जनता धार्मिक एवं सामाजिक विविधताओं के बाद भी शांति एवं सद्भाव से निवास करती हो। वह अहिंसा, सहिष्णुता इत्यादि के माध्यम से इस उद्देष्य की प्राप्ति के लिए सदैव प्रयत्नषील रहा। इस उद्देष्य की प्राप्ति के लिए उसने विभिन्न जनकल्याणकारी कार्य यथाः मार्गों पर वृक्षारोपण, कुंए खुदवाना, चिकित्सालयों एवं दवाई की व्यवस्था करना इत्यादि कार्योंपर बल दिया।
इस प्रकार अहिंसा एवं नैतिकता अषोक की धम्म नीति का मुख्य आदर्ष थे जो केवल मनुष्य मात्र के लिए ही नहीं बने थे अपितु यह सभी प्राणियों कें लिये निर्मित थे। अपने धम्म की इन्हीं विषिष्टता के कारण अषोक की धम्म नीति सभी संप्रदायों एवं सभी कालों में समान रूप से स्वीकार्य थी।

निष्कर्ष

सम्राट् अशोक का बौद्ध धर्म के प्रचार में योगदान न केवल धार्मिक क्षेत्र में, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा। कलिंग युद्ध के भयावह अनुभवों ने उन्हें अहिंसा और दया के मार्ग पर अग्रसर किया, जिससे उन्होंने शस्त्र विजय की नीति छोड़कर धम्म विजय को अपनाया। अशोक की धम्म नीति में नैतिकता, सहिष्णुता, दया और सत्य जैसे सार्वभौमिक मूल्य सम्मिलित थे, जो सभी धर्मों और संप्रदायों के लिए स्वीकार्य थे। उन्होंने अपने विशाल साम्राज्य में बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए व्यापक प्रयास किए, साथ ही सामाजिक कल्याण और शांति स्थापना में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अशोक की यह नीति विश्व

इतिहास में धर्म के माध्यम से शांति और सामाजिक समरसता की प्रेरणा के रूप में आज भी प्रासंगिक है। इस प्रकार, अशोक ने अपने शासनकाल में धर्म और शासन का ऐसा समन्वय स्थापित किया जो आज भी मानवता के लिए मार्गदर्शक सिद्ध होता है।

संदर्भ

- चतुर्दष षिलालेख––तेरहवां षिलालेख
- चतुर्दष षिलालेख––तीसरा लेख
- डी.आर. भंडारकर, (1960), अषोक, (ई–बुक), ए. चंद एण्ड कंपनी, दिल्ली, पृ.सं. 92,
- नीलकंठ षास्त्री (सं.), (1969), नंद–मौर्ययुगीन भारत, (प्रथम सस्ं करण), मोतीलाल बनारसीदास दिल्ली, पृ.सं. 263–264
- देहली–टोपरा स्तंभ–लेख 2
- सत्यकेतु विद्यांलकार, (2000), मौर्य साम्राज्य का इतिहास, (छठा संस्करण), श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, पृ.सं. 502
- चतुर्दष षिलालेख––नवां लेख (षाहबाजगढ़ी और कालसी)
- गिरनार चतुर्दष षिलालेष––11वां लेख
- चतुर्दष षिलालेख (षाहबाजगढ़ी)––तेरहवां लेख।
- देहली–टोपरा स्तंभ लेख––तृतीय लेख
- चतुर्दष षिलालेख (कालसी)––सप्तम लेख।
- स्वर्गीय डॉ. गिरिजा षंकर प्रसाद मिश्र, (1996), प्राचीन भारत का इतिहास, (ई–बुक), जयपुर पब्लिषिंग हाउस, जयपुर, पृ.सं. 130
- रतिभानू सिंह नाहर, (1974), प्राचीन भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, (प्रथम संस्करण), (ई–बुक), किताब महल, इलाहाबाद, पृ.सं. 242,
- दिल्ली, टोपरा स्तंभ अभिलेख –– द्वितीय लेख
- रतिभानू सिंह नाहर, (1974), पर्वोक्त, पृ.सं. 242